अविद्या जो अंतु, कंहीं पातो कीनकी,
लुढ़िया लोभ-लहर में, पीरु, अमीरु, महंतु,
लंघे चढ़ियो लख ते, को सुजाखो संतु,
भेद बिना भगवंतु, सामी डिठो जंहिं सरब में.

सामीजी इस श्लोक में अविद्या के प्रभाव का वर्णन करते हुए कहते हैं कि अविद्या का अंत कोई नहीं पा सका है। अविद्या (अज्ञान) बेअंत है। अविद्या रूपी विशाल नदी में बड़े-बड़े लोग भी बह गये हैं। अविद्या की लोभ-लहर से कोई बच नहीं पाया है। इस में 'छोटे-बड़े पीर, संत, धनवान एवं महंत आदि भी बह गये हैं। अपवाद रूप में कोई बिरला सजग संत ही इस पार कर सका है। अर्थात् ऐसा संत, जिसने अपने मन से द्वैत का भाव निकाल कर संसार की हर वस्तु में भगवंत के दर्शन किये हों।

माया वह शक्ति है, जो निराकार एवं मुख्त परमात्मा को अनंत आकार देने वाली, उसे दृश्य के दायरे में बंद कर देने वाली तथा आत्म-स्वरूप के ऊपर आवरण/पर्दा डालने वाली है। इस आवरण/पर्दे का नाम है अविद्या या अज्ञान। अविद्या, अज्ञान, भ्रम, देहबुद्धि, लोभ आदि माया की प्रजा कही गयी है। दूसरे शब्दों में अविद्या, अज्ञान, अहंकार, विषय, संपत्ति, लोभ-लालच आदि माया के ही रूप हैं। माया के ये सभी रूप मिथ्या और नाशवान हैं। माया अस्थिर एवं नश्वर होते हुए भी उसके अनंत रूप हैं, जिनकी थाह कोई नहीं ले सकता। अविद्या/अज्ञान का भी कोई अंत नहीं है। उसकी थाह कोई भी नहीं ले सका है। यह दृश्य-जगत् अविद्या से व्याप्त है। अविद्या अनेक संशयों एवं भ्रमों को जन्म देने वाली है। अविद्या या अज्ञान के कारण ही मनुष्य/जीव झूठ को सत्य समझकर दु:खी होता रहता है। अविद्या के आवरण के कारण जीव परमात्मा को पहचान नहीं पाता। सभी मनुष्य माया, प्रलोभन आदि विकारों में लिप्त है। आत्म-स्वरूप को देख पाना कठिन हो गया है।

महाकवि सामीजी के विचारानुसार सच्चे संत ज्ञानी होते हैं। ऐसे संत विरल ही होते हैं, जिन्हें परमात्मा का ज्ञान प्राप्त होता है। ऐसे सच्चे संत परब्रह्म, परमात्मा सच्चिदानंद के दर्शन कर सकते हैं। ऐसे निर्मोही, निर्लोभी, निरहंकारी, निष्काम एवं अंतर्ज्ञानी संतों के संबंध में संत कबीर कहते हैं-

आशा तजि, माया, तजै, मोह तजै अरु मान।
हरष, शोक, निंदा तजै, कहै कबीर संत जान।।

■